R.N.I.-CHHHIN/2010/36256 वर्ष 10, अंक 33, जुलाई-सितम्बर 2019 I.S.S.N.-2320-3455

राष्ट्रसेतु
RASHTRASETU

Peer Reviewed / Refereed
Research Journal in Hindi

भारतीय साहित्य एवं भाषा समन्वय की
पुरस्कृत और पंजीकृत शोध पत्रिका

R.N.I. No. CHHHIN/2010/36256 ISSN - 2320-3455

राष्ट्रसेतु RASHTRASETU

(भाषा समन्वय एवं भारतीय साहित्य की पुरस्कृत विश्वविद्यालयीन शोध पत्रिका)

Peer Reviewed / Refereed Research Journal in Hindi

वर्ष - 10 ■ जुलाई-सितम्बर 2019 अंक-33

प्रधान सम्पादक :

जगदीश यादव

संरक्षक एवं सलाहकार मंडल

- डॉ. म.मा. कडू, नागपुर
- डॉ. इंदरराज बैद, चेन्नई
- डॉ. टी.जी. प्रभाशंकर प्रेमी, बेंगलूर
- डॉ. श्रीमती मृदुला शुक्ल, खैरागढ़
- डॉ. आर. एम. श्रीनिवासन, चेन्नई
- डॉ. आरसु, कालिकट (केरल)
- डॉ. प्रमोद कोवप्रत, कालिकट वि.वि.(केरल)
- सं. राजेन्द्र केडिया (कोलकाता)
- ताराचन्द पंड्या 'श्याम', रायपुर
- आचार्य नर्मदा प्रसाद मिश्र 'नरम' रायपुर

सम्पर्क :

जगदीश यादव
प्रधान सम्पादक : राष्ट्रसेतु
एम.आई.जी.-14, हाउसिंग बोर्ड कालोनी
कचना/पो.आ.-सड्डू, रायपुर (छ.ग.) - 492014
Mob.: 7024888771

Jagdish Yadav
Chief Editor, Rashtrasetu
M.I.G.-14, Housing Board Colony
Kachna, P.O.-Saddu, Raipur (C.G.) - 492014
Mob.: 7024888771

Computer Operator Mob.: 9827980289, Email : printxflex@gmail.com

● Bank Account : jagdish singh yadav A/c. No. 63045195895, State Bank of India, Motibagh Raipur, (C.G.) / IFSC Code : SBIN 0030443

● प्रकाशक, मुद्रक तथा स्वत्वाधिकारी जगदीश यादव द्वारा मिश्रा भवन, आमानाका, रायपुर से प्रकाशित एवं यादव प्रिन्टर्स, कोटा वार्ड रायपुर द्वारा मुद्रित ।

● किसी भी रुप में सामग्री की नकल प्रतिबंधित ।

● सभी पद, सेवा, लेखन अवैतनिक एवं मानदेय रहित ।

● न्याय का क्षेत्र रायपुर (छ.ग.) ।

● राष्ट्रसेतु में प्रकाशित सामग्री में व्यक्त विचार लेखकों/शोधार्थियों के अपने हैं, पत्रिका भी उनसे सहमत हो, यह आवश्यक नहीं ।

निःशुल्क वितरण हेतु प्रकाशित अमूल्य शोध पत्रिका

हिन्दी उपन्यास में विकास बनाम विस्थापन

■ डॉ. टीना

हमारे देश में वास्तव में विकास का मुद्दा नेहरु जी बनाम गाँधी जी का है । जब नेहरुजी के प्रधानमंत्री काल में बडे-बडे बाँध बने, भीमकाय कारखाने बने तब उन्होंने बडे गर्व से कहा कि वे सब निर्माण आधुनिक भारत के तीर्थ हैं । वास्तव में नेहरुजी आधुनिक भारत के निर्माता कहे जाते हैं । गाँधीजी कुछ और सोचते थे । उनका कहना था कि स्थानीय समाजों को यानी गाँव और कस्बों को स्वावलंबी होना चाहिए । वे तर्क देते थे कि आधुनिकता के नाम पर जो विकास किया जाता है उसमें जड से जुड़े हुए लोग कट जाते हैं । इन दोनों नेताओं के विचार में एक बडी समानता है दोनों ही राष्ट का भला चाहते थे । इस समानता के होते हुए भी उनमें एक बडा अंतर था और यह अंतर साधनों (मेन्स) का था । नेहरुजी विशाल उत्पादन द्वारा लोगों की आय में वृद्धि करना चाहते थे । वे आर्थिक वृद्धि को बढाना चाहते थे । गाँधीजी कहते थे कि इस तरह के विकास में सामाजिक न्याय और आय के समान वितरण का सिद्धांत सूली पर चढ़ जाता हैं । दोनों की विचारधाराओं के समर्थक भावनात्मक हो जाते हैं ।

नेहरुजी विकास को राज्य केन्द्रित बनाना चाहते थे । गाँधी जी शक्ति का विकेन्द्रीकरण चाहते थे । यह सही है कि पिछले वर्षों में हम ने विकास किया है, यह भी सही है कि खाद्यान्नों में हम स्वावलंबी है, यह भी सही है कि हमने उद्योगों को बढाया है । लेकिन यह भी सही है कि कोटि-कोटि जनता को इस विकास से कुछ मिला नही हैं ।

सच्चे विकास का अर्थ होता है जिस में समाज का हर वर्ग शामिल हो । हर वर्ग के हित में होना चाहिए विकास तभी समाज का सही विकास संभव है । स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद विकास की होड लग गई थी । उस समय केवल योजनाएँ लागू करना लक्ष्य था । इस में सर्वहारा वर्ग या अन्य पिछडी हुई जाति-जनजाति के विकास की भी योजनाएँ बनने लगी । सरकार द्वारा आयोजित विकास योजनाएँ उनके विनाश का कारण बनने लगी । ये योजनाएँ उन्हें उनकी परंपरा से अलग करने लगी । उनका अस्तित्व, अस्मिता, आत्म सम्मान, इतिहास, कला और संस्कृति सब कुछ नष्ट होने लगा । सभी तरह से उन्हें नजरअंदाज कर दिया गया । ऐसे ही पिछडे और उपेक्षित जन-जातियों का करुण चित्रण कुछ उपन्यासकारों ने अपने उपन्यासों में किया है । नागार्जुन का 'वरुण के बेटे' मछुआरों की जीवन की कथा है । इसमें जमीन्दार कैसे उनके पोखर पर कब्जा कर उन्हें अपने पुश्तैनी पेशे से जुदा करना चाहते है और मछुआरे संगठन बनाकर कैसे उनका सामना करते है, उसका चित्रण है । जमीन्दारों की इस योजना के खिलाफ एक तिरासी साल का बूढा गोनड अपना रोष प्रकट करता हुआ कहता है-'' यह पानी सदा से हमारा रहा है, किसी भी हालत में हम इसे छोड नहीं सकते । पानी और माटी न कभी बिके है, न कभी बिकेंगे । गढपोखर का पानी मामूली पानी नहीं, वह तो हमारे शरीर का लहू है । जिनगी का निचोड है ।'' (विरुण के बेटे, पृ. 27)

मछुआ संगठन बनाकर विरोध करते हैं और पुलिस इन्हें गिरफ्तार करके ले जाती है और वह नारे लगाते हैं- ''इन्किलाब जिन्दाबाद । मछुआ संघ जिन्दाबाद... हक की लडाई... जीतेंगें । ... गढपोखर हमारा है, हमारा है ।'' (वही, पृ. 99)

समकालीन संदर्भ में विकास योजनाओं के कारण विस्थापित होनेवालों की संख्या बढ़ती जा रही है । इन विस्थापितों में सबसे ज्यादा लोग आदिवासी लोग हैं । आदिवासी के विस्थापन के विभिन्न पहलुओं को समकालीन उपन्यासकारों ने अपना विषय बनाया है । हिंदी में संजीव के उपन्यासों में औद्योगीकरण से उत्पन्न समस्याओं पर प्रकाश डाला गया है । पाँव तले की दूब में पंचपहाड के खनिज बहुल क्षेत्र का चित्रण हुआ है । डोकरी नाप विद्युत संस्थान के मंच पर घटित इस कथा के माध्यम से लेखक यह बताना चाहते है कि औद्योगीकरण किस प्रकार गाँवों तथा आदिवासियों को विस्थापित कर रहा है । फिलिप नामक आदिवासी युवक इस स्थिति को सभा के सामने प्रस्तुत करता है कि यह धरती सोना उगलती है और आदिवासी इस धरती की कंगाल सन्ताने है । अधिकारी और पूँजीपति न केवल शोषण करते है अपितु राष्ट्रीय संपत्ति की लूट भी करते हैं । उपन्यास में सुदीप इन परिस्थितियों को बदलना चाहता है ।

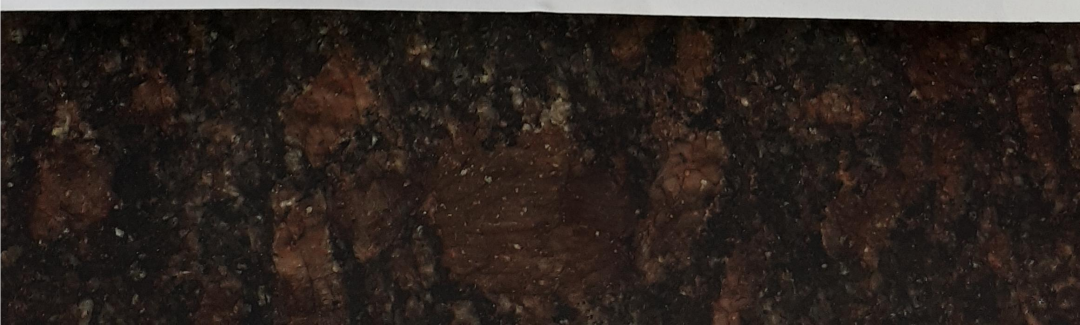

उसकी राय में आदिवासी लोगों की दो कमजोर नसे हैं- अरण्यमुखी संस्कृति और उत्सवधर्मिता । पहली संस्कृति उन्हें सभ्यता के विकास से जुडने नहीं देती और दूसरी उन्ह कंगाल बनाती रहती है । फिलिप अपने आदिवासी समाज की नाजुक स्थिति पर बहुत चिंतित था । अपने ऊपर हो रहे जुल्मों से वह परेशान हो उठता है । उनके अनुसार-''प्रदेश की दो तिहाई आय हमसे होती है, और हमारी हालत न तन में साबुन कपडा न पेट में भरपेट भात, दवा-दारु, पढाई-लिखाई की बात छोड ही दीजिए । बहुत पैसा दिया सरकार ने, सरकार घोषणाएँ करती नहीं थकती लेकिन हम कंगाल के कंगाल । मालोमाल कोई और हो रहा है । हमने कहा हमें अपने करम पर छोड दो, लेकिन वे नहीं छोड़ते ।'' (पाँव तले की दूब, पृ.112)

संजीव के उपन्यास 'धार' में बांसगडा गांव में हरी-भरी जमीन में तेजाब का कारखाना खुलता है । परिणामस्वरुप वहाँ के खेत, कुँआँ-पोखर सब खराब हो जाते हैं, फसलें सूख जाती हैं और पीने का पानी भी नहीं मिलता । तेजाब की फैक्टरी से निकलनेवाली जहरीली हवा लग जाने के कारण जंगल मुरझा जाता हैं । जंगलों में जानवरों के स्थान पर मजदूर और उनके बच्चे है । यहाँ की संथाल जाति जो देश की अति प्रचीन जाति है, बरबाद हो जाती है । एक पात्र कहता है - ''पानी का पाइप हमारा छाती पर से गुजरता, हमको एक बूँद पानी नयी, रेल लाइन बगल में है मगर हमारा कातिर सौ कोस दूर, वोट देने को हमको आज तक कोई बोला नयी, हमारा चिट्ठी-पत्र निहाल सिंह की दुकान के पते पर आता । हमारा कोई पता ठिकाना नयी।'' (धार, पृ.57)

संजीव के उपन्यास 'सावधान नीचे आग है', में चंदनपुर के कोयला खदान की कहानी है । 1954 तक लगातार कोयला खदान में आग लग जाती है और कई लोग जल जाते हैं । इस इलाके की भूमि बैठ जाती है जिससे मकान भी नीचे बैठने लगते हैं । पीने के पानी तक की किल्लत हो जाती है । कोयला खदान का गंदा पानी दामोदर नदी में बहाया जाता है । इसलिए वहाँ के लोग कई प्रकार के रोगों के शिकार हो जाते है और जानवर भी मर जाते हैं । इन पारिस्थितिक समस्याओं से लोग विस्थापित होने के लिए मजबूर हो जाते हैं ।

आदिवासियों का पलायन और विस्थापन सदियों से होता रहा है और ये आज भी जारी है । आदिवासियों के जंगलों जमीनों, गाँवों, संसाधनों पर कब्जा कर उन्हें दर-दर भटकने के लिए मजबूर करने के पीछे मुख्य कारण हमारी सरकारी व्यवस्था रही है । वे केवल अपने जंगलों, संसाधनों या गाँवों से ही बेदखल नहीं हुए बल्कि, मूल्यों नैतिक अवधारणाओं, जीवन-शैलियों, भाषाओं एवं संस्कृति से भी वे बेदखल कर दिये गए हैं । हमारे मौलिक सिद्धान्तों के अंतर्गत सभी को विकास का समान अधिकार है । लेकिन आजादी के बाद के पहले पाँच वर्षों में लगभग ढाई-लाख लोगों में से 25 प्रतिशत आदिवासियों को मजबूरन विस्थापित होना पड़ा । विकास के नाम पर लाखो लोगों को अपनी रोजी-रोटी , काम धंधों तथा जमीनों से हाथ धोना पडा । उनको मिलनेवाले मूलभूत अधिकार जो उनकी जमीनों से जुड़े थे वे भी उन्हें प्राप्त नहीं हुए ।

बाँध निर्माण के तहत विस्थापित होते जन समूह की करुण गाथा वीरेन्द्र जैन के 'डूब' और 'पार' उपन्यास में है । 'डूब' उपन्यास की कथाभूमि लडैई गाँव है । राजमाता घोषणा करती है कि बेतवा नदी के राजघाट नामक स्थान पर बाँध बनाया जायेगा । इंदिरा जी पहला ईंट रखती है और लडैई सिरसौदिया आदि गाँवों को डूब क्षेत्र घोषित कर दिया जाता है । जगह-जगह गड्ढे खुद जाते हैं, लोग बेचैन हो उठते हैं क्योंकि उनके पुनर्वास का कोई मुकम्मल इंतज़ाम नहीं हो पाता है । डूब क्षेत्र में आने के कारण वहाँ के लोगों का जीवन स्थिर हो जाता है । वहाँ के लोगों का सरकार राशन पानी तक देना बंद कर देती है । और कहती है कि उनके कोटे सरकार ने कुछ तय नहीं किया है । पूरा उपन्यास एक अनिश्चितता में बीतता है । अंत में आते-आते लड़ैई डूब क्षेत्र से बाहर घोषित किया जाता है और वहाँ अभयारण्य बनाने की योजना करती है जहाँ जंगली जानवर बेखटक के रह सके । अरविंद पांडे माते को बताता है कि सरकार लडैई को फिर से पहाड़ पर बसाना चाहती है जहाँ वह पहले बसा करते थे, वह उन्हें फिर से आबाद करके वहाँ देश-विदेश के पर्यटकों के लिए एक विचित्र प्राणी के रुप रखना चाहती है । इस पर माते कहते हैं -'आदमियों की कीमत पर जानवरों की रक्षा करना चाहती है

यहा ? गरीबों के जीवन की बलि लेकर अमीरों की तफरीह का बंदोबस्त करना चाहती है यह सरकार ? और कोई इसका हाथ पकडनेवाला नहीं बचा ? कोई नहीं, कोई भी नहीं ? ('डूब', पृ.279) लेकिन बाँध टूट जाता है और पूरा का पूरा गाँव डूब जाता है, उसके लोग, पशु और फसलें आदि नष्ट हो जाती है लेकिन सरकार इसे खाली करवाया गया इलाका कहते हैं । वीरेन्द्र जैन का पार उपन्यास 'डूब' का पूरक है । 'पार' की कथा आदिवासी खेरे जीरोन से शुरु होती है । जीसेन खेरे में बसा 'राउत जनजाति' लडैई से वहाँ चरने आये मवेशियों को देखकर परेशान हो उठा । उन्हें मालूम पड़ा कि राजघाट बाँध के लिए मिट्टी और पेड ले जाने के बाद सब कहीं गड्ढे हैं और वहाँ न हरियाली बची न जमीन । राउत खेरे का मुखिया गुनिया से कहता है- 'अब डाँग में वह भटकता नहीं रही । कितना भटकने के बाद जलावन मिलता है । गद मिलती है । शहद मिलता है । जड़ी-बूटियाँ तो जाने कहाँ समाती जा रही है । हम भले ही हरा-भरा रुख नहीं काटते । वह देवता है हमारी निगाह में । पर फिर भी हरे-भरे रुख बच पाए ? उनका कटना हम रोक पाए ? रोक पाएँगे कभी ? '' (पार-पृ.-59) सही में उपन्यास की मूल चिंता विकास के प्रारुप को लेकर है । जन-जीवन को अस्त-व्यस्त कगार, विनाश के कगार तक पहुँचा देनेवाला विकास का औचित्य क्या है ? परिकल्पना में मानवीय पक्ष छूट क्यों जाते हैं ? पार इसी की तह में जाने का प्रयास है ।

विकास जो सरकार की नज़र में प्रगति का मार्ग है वह इन जन-जातियों के लिए विनाश का ही मार्ग है । उनको अपनी संस्कृति से ही हाथ धोना पड़ता है । संस्कृति और मानव को मिटा कर कुछ लोगों के लाभ के लिए किये जा रही विकास योजनाएं समाज को अपंग बना रही है । जब तक जनजाति समाज को साथ लेकर विकास योजनाएँ नही बनायी जाएँगी तब तक ये देश की मुख्यधारा में शमिल नहीं हो पाएँगे । सभ्य समाज द्वारा उनका और उनके अस्तित्व, अस्मिता, आत्मसम्मान, इतिहास कला और संस्कृति और पर्यावरण का संरक्षण करने से ही उनके साथ न्याय करना होगा ।

- सहा. प्राध्यापक
पवशिशराजा कालेज
पुलवल्ली, वायनाडु
(केरल) 673579

संदर्भ ग्रंथ सूची :

1. हिन्दी उपन्यास का इतिहास - गोपाल राय
2. विकास और जनचेतना - रामाश्रय राज, राजकृश्न
3. वीरेन्द्र जैन का साहित्य - सं. मनोहरलाल